सबकी तरफ से बोलने वाले कवि

कृपाशंकर चौबे

केदार जी ने अपने काव्य-व्यक्तित्व को ऐसे ढाला कि उनके बाद की एक पूरी पीढ़ी उनकी कलात्मक कोशिश के पीछे चली

केदारनाथ सिंह भारत की समृद्ध साहित्य परंपरा के ऐसे महत्वपूर्ण हिस्सेदार थे जिन्हें अलग कर भारतीय साहित्य का इतिहास नहीं लिखा जा सकता। हिंदीतर भाषिक समाजों में जितने सम्मान केदारजी को मिले उतने हिंदी के किसी कवि को नहीं मिले। केदार जी को आंध्र प्रदेश का जाशुआ पुरस्कार, केरल का कुमारन आशान पुरस्कार और ओडिशा का जीवन भारती सम्मान मिला। इसके अलावा व्यास सम्मान, दयावती मोदी पुरस्कार, उत्तर प्रदेश का भारत भारती और मध्य प्रदेश का मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, साहित्य अकादमी पुरस्कार, साहित्य अकादमी की महत्तर सदस्यता और ज्ञानपीठ पुरस्कार भी उन्हें मिला। दरअसल वह अखिल भारतीय कवि थे। उनकी अखिल भारतीय स्वीकृति का कारण कहीं न कहीं उनका अखिल भारतीय बोध भी था। वह हिंदी के ऐसे पहले महत्वपूर्ण कवि थे जिन्होंने अनवरत हिंदी दिवस को भारतीय भाषा दिवस के रूप में मनाने के लिए अभियान चलाया। उनकी तमाम कविताओं का अंग्रेजी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। वह साहित्य अकादमी के इस ध्येय वाक्य के मुखर प्रवक्ता थे कि भारतीय साहित्य एक है, जो कई भाषाओं में लिखा जाता है। केदारजी की इस भाषा दृष्टि के निर्माण में कदाचित उनकी माता लालझरी देवी का योगदान था। उनकी मां के लिए अनजान कोई नहीं था। उड़िया, बांग्लाभाषी से भी अपनी ठेठ पुरबिया भोजपुरी में बात करतीं और ताज्जुब कि लोग उनकी बात समझ भी लेते। छह साल पहले कोलकाता में 102 वर्ष की उम्र में जब केदारजी की मां का निधन हुआ तो उन्होंने उन पर एक कविता लिखी। इस कविता में केदार जी मां के अस्थि कलश को गंगा में प्रवाहित करते हुए प्रार्थना करते हैं, 'मैंने भागीरथी से कहा/ मां, / मां का खयाल रखना / उसे सिर्फ भोजपुरी आती है।'

केदारजी अपने लोगों से भोजपुरी में ही बात करते थे। वह रहते दिल्ली में थे, किंतु गांव से उनका गहरा नाता था। वह अक्सर गांव जाते रहते थे। बलिया के जिस चकिया गांव में केदारजी का जन्म हुआ वहां के परिवेश और बोली-बानी ने उन पर गहरा असर छोड़ा और वह उनकी रचनाओं में व्यक्त होता रहता था। वह गांव से ही शक्ति और प्रेरणा अर्जित करते थे। गांव का वह गांवपन उनकी प्राण नाड़ी में किस कदर बसा था, इसका प्रमाण 'माझी का पुल' नामक उनकी कविता में मिलता है। गांव की संचित स्मृतियों की पूंजी से ही पैदा होती है, 'मंच और मचान' जैसी कविता। केदार जी अपनी जड़ों से कभी नहीं कटे। उनकी प्रतिबद्धता की जड़ें भारतीय आबोहवा और जमीन में थीं। वही उनकी ताकत थी। बिंब और विचार उस ताकत में स्पंदित रहते थे। धीरे-धीरे उसका विस्तार पूरे ब्रह्मांड तक हो जाता था, 'इस पूरे ब्रह्मांड को एक छोटी-सी सांस की डिबिया में भर लो।' केदारनाथ सिंह ने सदा-सर्वदा अपनी कविताओं में जीवन को भरने का काम किया। 'टूटा हुआ ट्रक' भी उन्हें निराश नहीं करता, अपितु टूटने के बाद भी वह चलने को तैयार है। 'टूटा हुआ ट्रक' देखकर भी कवि को विश्वास है कि जीवन रहेगा। जीवन के बारे में ऐसी दृष्टि रखने वाला ही कह सकता है, 'बुद्ध के बारे में सोचना पृथ्वी पर पानी के भविष्य के बारे में सोचना है।'

केदार जी के लिए 'लिखना चुप हो जाने के विरुद्ध एक खामोश लड़ाई का ही दूसरा नाम है।' वह एक ऐसे कवि थे जो सबकी तरफ से बोलते थे- यहां तक चींटी से लेकर बाघ तक की ओर से और पत्थर से लेकर हिमालय तक की ओर से। वह अपने भीतर की सारी सच्चाई के साथ बोलते थे और यही कारण है कि उनकी एक-एक पंक्ति गहरे तक असर करती थी। मुक्त छंद के अलावा छंद में भी उन्होंने लिखा। गद्य में भी उन्होंने जो कविता लिखी उसमें भी लय है। 'विद्रोह' शीर्षक कविता में केदार जी बताते हैं कि कैसे बिस्तर अपना इस्तीफा सौंपकर कपास के पास लौटना चाहता है और मेज, कुर्सियां संयुक्त मोर्चा बनाकर अपने पेड़ को याद करते हैं और किताबें बांस के जंगल, बिच्छुओं के डंक और सांपों को याद करती हैं। गांव के अनुभव के समांतर शहर का अनुभव भी उनकी कविता में एक ही समय दिखाई पड़ता है। 'बनारस' शीर्षक कविता में वह कहते हैं-'अपनी एक टांग पर खड़ा है यह शहर/ अपनी दूसरी टांग से बिलकुल बेखबर।'

केदार जी ने पहली कविता सुभाषचंद्र बोस पर लिखी थी। वह जब हाईस्कूल में थे तो उनकी पहली कविता छपी, लेकिन विधिवत काव्य लेखन उन्होंने 1952 में शुरू किया था। अज्ञेय ने 1953 में उनकी कविताएं 'प्रतीक' में छापीं और 1959 में तीसरा सप्तक में भी उनकी कविताओं को शामिल किया। 1960 में उनका पहला काव्य संकलन 'अभी बिल्कुल अभी' छपा। उसके 20 वर्षों के अंतराल के बाद उनका दूसरा काव्य संग्रह 'जमीन पक रही है' आया जिसे उनका सर्वाधिक प्रौढ़ संग्रह माना जाता है। 'यहां से देखो', 'अकाल में सारस', 'उत्तर कबीर और अन्य कविताएं', 'बाघ' 'टालस्टाय और साइकिल' और 'सृष्टि पर पहरा' उनके अन्य महत्वपूर्ण काव्य संग्रह हैं।

केदार जी ने अपने काव्य व्यक्तित्व को ऐसे ढाला कि उनके बाद की एक समूची पीढ़ी उनकी कलात्मक कोशिश के पीछे चल पड़ी। काव्य के अलावा उन्होंने गद्य को भी नई धार दी। उनकी चार गद्य पुस्तकें-'कल्पना और छायावाद', 'आधुनिक हिंदी कविता में बिंब विधान', 'मेरे समय के शब्द' और 'कब्रिस्तान में पंचायत' साहित्य की धरोहर बन चुकी हैं। केदारजी जितने बड़े साहित्यकार थे, उतने ही अच्छे व्यक्ति भी। वह शिशु जैसे सरल और निश्छल थे। अंतरंग बतकही के दौरान मोबाइल के बज जाने पर उस मोबाइल को भी केदार जी डांट देते थे-'चुप्प, जब न तब बजने लगता है।' केदार जी जब कभी सुबह फोन करते तो पूछते थे, 'जग गए हो?' हां में जवाब देने पर कहते थे, 'लेकिन तुम्हारी बातों में नींद है।' भला एक कवि के अलावा ऐसी टिप्पणी और कौन कर सकता है? वह कोलकाता को अपना दूसरा घर मानते थे। सर्दियों में अपनी बहन रमा सिंह के घर आकर रहते थे। इस सर्दी में भी आए थे। तबीयत बिगड़ी तो उनके भांजे राजेश सिंह ने कोलकाता के एक अस्पताल में उन्हें भर्ती कराया। स्थिति में सुधार नहीं हुआ तो उनके पुत्र सुनील कुमार सिंह उन्हें दिल्ली ले गए। एम्स में सोमवार की रात उन्होंने आखिरी सांस ली। केदारजी जा चुके हैं। उन्होंने 'जाना' शीर्षक कविता में सही कहा है कि जाना हिंदी की सबसे खौफनाक क्रिया है।

(लेखक महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एवं कोलकाता केंद्र के प्रभारी हैं)

response@jagran.com